P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-4*(Supplementary Issue) July- 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 Remarking An Analisation

नरेश मेहता के काव्य में भाव–बोध

सारांश

कवि कहता है कि न तो कहीं नवीनता है, न कहीं उपलब्धि, सफलता का झूठा एहसास। उनमें बड़प्पन का ख्वाब चुनता रहता है। नरेश मेहता के काव्य का प्रमुख अंश मानवतावाद की भावनाओं से परिपूर्ण है। मेहता जी ने पूरी आस्था के साथ मनुष्य को पहचाना है, उसके मानवीय संबंधों को स्वीकारा है, और तत्पश्चात् लोक–मंगल और सांस्कृतिक संदर्भों में अपने मानवतावाद को प्रस्तुत किया है। यों तो मेहता जी का मानव–बोध उनकी अनेक कविताओं में प्रस्तुत करने में सक्षम है। सोवियत भूमि का चित्रण करते हुए कवि लिखता है।

''यह यौवन की भूमि सोवियत
जहां मनुज की, उसके श्रम की होती पूजा।
पूंजी और साम्राज्यवाद की तोड़ बेड़ियाँ,
हाथों में नवजीवन की उत्काएं लेकर, मनुज खड़ा है।
कुतुब सरीखा।।''

मुख्य शब्द : नरेश मेहता, संस्कृति–बोध, भाव–बोध।

शशि बाला रावत
प्रवक्ता,
हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय,
अगस्त्यमुनि, रूद्रप्रयाग

प्रस्तावना

नरेश मेहता की आरम्भिक कविताएं छायावादी एवं रहस्यवादी ढंग की थी, किन्तु आगे चलकर उन्होंने उसे कविता कहने से इनकार कर दिया। मेहता जी ने स्वीकार किया कि ''नया तो मेरा युग है,'' मेरी प्रकृति है तथा सबसे नया मैं हूँ। उनकी कविता मैं एक और भावनात्मक सौन्दर्य है, तो दूसरी ओर अभिनय शिल्प है। प्रकृति प्रेम, सौन्दर्य, धर्म–संस्कृति, युद्ध और शान्ति, मानवतावाद व आधुनिक बोध, नयी जीवन–दृष्टि मेहता जी के काव्य में प्रचुरता से पाए जाते हैं। प्रकृति मेहता जी के काव्य का केन्द्रीय भाव है। ''दूसरा सप्तक'' से लेकर ''उत्सव'' तक की कविताओं में प्रकृति–बोध से सज्जित रचनाओं की संख्या सर्वाधिक है। कवि को संघ, प्रभात, दोपहर, मेघ, बसन्त और फाल्गुन मास के सौन्दर्य विशेष प्रिय हैं। चाँदनी के सौन्दर्य को कवि ने निम्न प्रकार से दर्शाया है।

''झर–झर गोरी छवि की कपास
किसलीयत मेरू आवन फ्लास
किसमिसी मेघ चोबर विलास
मनबरफ शिखर पर नैन प्रिया,
किन्नर रंभा चाँदनी।''

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य नरेश मेहता के काव्य में भाव–बोध का अध्ययन करना है।

नरेश मेहता का भाव–बोध

मेहता जी की दृष्टि प्रकृति की उदान्त रूप पर टिकी हुई है। जहां कोई प्रतिस्पर्द्धा नहीं है, केवल दान ही दान है, केवल कल्याण ही कल्याण है। धूप को हम रोज अनुभव करते हैं, परंतु धूप को, धूप–कृष्णा रूप में देख पाना निश्चित ही एक संस्कार की मांग करता है। आकाश की अनन्तता से हम सब अभिभूत होते हैं, परंतु ''आकाश'' को एक ''गायन्त्रित'', ''उषा'' और संध्या को उसकी ''गायत्रियों'' के रूप में देख पाना कवि नरेश की ही विशिष्टता है। प्रकृति को अपनी पूरी सांस्कृतिक अनुभूति का अभिभाज्य अंग बनाकर ग्रहण करना और उसे उसी में अभिव्यक्त कर देना नरेश मेहता की प्रकृति दृष्टि की सबसे केन्द्रित प्रकृति है।

अपने कवि–जीवन के आरंभिक काल में मेहता जी ने ''उषा'' के प्रति जिज्ञासा व्यक्त की है तथा उसके सौन्दर्य से अभिभूत हुए थे। प्रकृति के झरोखों से संस्कृति की पहचान और शोध की जो प्रक्रिया नरेश जी के कवि–व्यक्तित्व में

आज से तीस वर्ष से भी अधिक पहले प्रारंभ हुई थी। अतः आज भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठतम् गायकों में नरेश जी का नाम लिया जा सकता है। मेहता जी के काव्य में संस्कृति–बोध अनेक आयामों में विकेन्द्रित हुआ है। उनकी कविताओं में अक्षत, चंदन, रोली, सिंदूर, उषा, इन्द्र, दिकपाल में विकसित पति–पत्नियों के गीत का उल्लेख उनकी सांस्कृतिक दृष्टि से परिचायक है। मेहता जी ने इस कथन को पुष्ट करने के लिए निम्नलिखित पंक्तियों को पर्याप्त माना है।

''तभी उन किरनाश्यों की टाप
भर गयी उन नयनों में बात,
हो उठे उनके अंचल लाल,
लाल कुंकुम में डूबे गाल।''

पौराणिक आख्यानों के माध्यम से कवि ने अपने चार खण्ड काव्यों ''संशय की एक रात'', ''महाप्रस्थान'', ''प्रवाद–पर्व'', तथा ''शबरी'', में भारतीय संस्कृति के महत्वपूर्ण पक्ष को उभारा है। युद्ध पूरे संसार का अनिवार्य सत्य रहा है। युद्ध के पीछे राज्य–लिप्सा की ही भावना नहीं होती, बल्कि धर्म, न्याय एवं शांति की स्थापना के लिए भी युद्ध होते हैं। 'संशय की एक रात' में राम जिस समय लंका की ओर प्रस्थान करते हैं। उनके मन में प्रश्न उठता है कि क्या युद्ध ही एकमात्र रास्ता है। राम की यह शंका वस्तुतः कवि की शंका है। राम यद्यपि परिषद के निर्णय को स्वीकार कर युद्ध करते हैं। किंतु प्रश्न अपनी जगह पूर्ववत् बना रहता है। भारतीय संस्कृति का केन्द्रीय उत्स करूणा है। मेहता जी के राम इसी कल्पना की प्रतिमूर्ति है। राम के चरित्र में करूणा की अवतारणा बड़े मार्मिक स्तर पर हुई है। ''महाप्रस्थान''– के भी अनेक स्थल महत्वपूर्ण या करूणापूर्ण उक्तियों से भरे पड़े हैं। युधिष्ठिर के व्यक्तित्व में करूणा की पराकाष्ठा देखी जा सकती है :–

''आज, नही ंतो कल,
राजा से अकिक कठोर हो जाएंगे,
ये राज्य
और सुदूर भविष्य में
राज्य से भी अधिक अमानवीय हो जाएंगी,
ये राज्य–व्यवस्थाएं।''

इस सत्य का दर्शन हम आज के समाज में बड़ी आसानी से कर सकते हैं। आज व्यक्ति एवं उसकी समस्त मर्यादा राज्य व्यवस्था की नीचे पदमर्दित है। अतः मेहता जी की दृष्टि अपने प्राचीन ग्रन्थों के प्रतिपाद्य को ज्यों की त्यों अन्ध स्वीकृति प्रदान करने वाली नहीं है। मेहता जी की काव्य–यात्रा क्रमशः हमें उस भूमि तक पहुंचाने की अनधक तपश्चर्या है। जहां पहुंचकर स्रृष्टि का यह कल्याणकारी महाभाव अपने में गहरे उतरता हुआ अनुभव होता है। मेहता जी की कविताएं जिस उदात्त भूमि पर अवस्थित होकर रची गयी है। वह सहज प्राप्य नहीं है। कवि को कहीं धूप की ब्राह्मणी ''उपनिषद'' के रूप में दिखायी पड़ती है। जिस बोध से वृक्ष मेहता जी के चेतन को मण्डित करता है। मेहता जी की व्यष्टि और समष्टि के संतुलित संबंध को स्वीकार करते हैं। वह ऐसी सामाजिकता का विरोध करते हैं जो व्यक्ति से उसके व्यक्तित्व को ही छीन लेती है, साथ ही वह समाज से कटकर भी नहीं रहना चाहते। कवि का एकांत बोध सामाजिक प्रयोजन रखता है, क्योंकि उसकी प्रार्थना है कि उसे एकांत मिले, जिसमें वह सारे संसार की कथा लिख सके। मेहता जी युगीन–उत्पीड़न, दैन्य और घोर व्यक्तिवादिता पर व्यंग्यपरक दृष्टि डालते हुए व्यक्ति के खोखलेपन को उजागर करते हैं। ''यदि मैं मेयर होता'' रचना इस तथ्य को उजागर करती है कि नगर को घर जैसा सुविधा सम्पन्न एवं स्वच्छ बनाने की बात अत्यन्त क्षणिक रूप में मन में उठती है, किंतु निजी स्वार्थों के उदय होते ही लुप्त हो जाती है।

निष्कर्ष

कवि का काव्य फलक नितान्त विस्तृत है। प्रकृति, प्रेम, संस्कृति आदि मेहता जी के प्रिय धरातल हैं, जहाँ से भावों की सम्पदा ग्रहण की गयी है। ''अनुभूति के स्तर पर भी कवि की मधुकरी वृत्ति देखी जा सकती है। कहीं खालिस रूमानी तो कहीं पुरूष निस्संग। कवि–धर्म की सबसे बड़ी कसौटी भाषा है। काव्य में अभिव्यंजना, सामान्य अभिव्यक्ति के क्षेत्र से हटकर विशिष्ट शैली का रूप धारण कर लेती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *नरेश मेहता के काव्य का अनुशीलन– पृ0सं0– 70*
2. *काव्य–कृत्तियों का विवेचनात्मक अध्ययन– पृ0सं0–71*
3. *व्यक्तिगत् बातचीत के आधार पर।*
4. *नरेश मेहता– 'संशय की एक रात'– पृ0सं0– 33*